4

तुलनात्मक लोक प्रशासन का विकास

प्रारम्भ—लोक प्रशासन का उद्गम और विकास एक पृथक विषय के रूप में सन् 1887 से प्रारम्भ माना जाता है। 1887 के पूर्व लोक प्रशासन के प्रबन्ध के सम्बन्ध में कोई लिखित सामग्री उपलब्ध नहीं है। भारत में ऐसे प्रमाण हैं जिससे यह प्रमाणित होता है कि 1887 के पूर्व लोक प्रशासन पर काफी साहित्य उपलब्ध था। यहाँ यह स्मरणीय है कि एक क्रिया के रूप में तो लोक प्रशासन काफी प्राचीन है तथापि अध्ययन की एक स्वतन्त्र शाखा या विद्या के रूप में उसका उदय वर्तमान काल में ही हुआ है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि एक लम्बे समय तक प्रशासन सम्बन्धी समस्त चिन्तन राजनीति, नीतिशास्त्र तथा विधिशास्त्र जैसी विद्याओं के साथ घुला-मिला रहा। यही कारण है कि रामायण और महाभारत जैसे ग्रन्थों के अन्दर राजनीतिक चिन्तन के साथ ही प्रशासन सम्बन्धी चिन्तन भी पर्याप्त मात्रा में सन्निहित है। स्मृतियाँ हिन्दुओं के विधि ग्रन्थ हैं, जिनमें न्यायिक संगठन एवं सामान्य प्रशासन का विस्तार से वर्णन किया गया है। कौटिल्य के *'अर्थशास्त्र'* में राज्य के सैद्धान्तिक आधारों की अपेक्षा प्रशासन की समस्याओं का अधिक विश्लेषण किया गया है। साथ ही उसकी लोक प्रशासन सम्बन्धी अवधारणा समय से सम्बन्धित होने के कारण, विश्वव्यापी मान्यता प्राप्त न कर सकी। यूरोप में राजनीतिक दार्शनिकों जैसे प्लेटो और अरस्तू ने ग्रीक नगर-राज्यों के प्रशासनिक तरीकों का उल्लेख किया है। मैकियावली की प्रसिद्ध रचना *'प्रिन्स'* में शासन संचालन एवं प्रशासन काल की चर्चा देखने को मिलती है।

आधुनिक काल में राजनीतिशास्त्र के ग्रन्थों तथा राजनीतिज्ञों के संस्मरणों के समय-समय पर प्रशासकीय विषयों की विवेचना की गयी, परन्तु 'लोक प्रशासन' को अध्ययन का स्वतन्त्र विषय नहीं माना गया। 17वीं सदी तक तो 'लोक प्रशासन' शब्द का प्रयोग ही नहीं किया गया था। यूरोपीय भाषाओं में 'लोक प्रशासन' शब्द का प्रचलन 17वीं सदी में हुआ जब सम्राटों द्वारा लोक कार्यों में प्रशासन तथा उनकी निजी घरेलू व्यवस्था के बीच अन्तर किया जाना जरूरी हुआ। 1748 में माण्टेस्क्यू के आगमन से प्रशासन और राजनीति में स्पष्ट विभाजन देखने को मिलता है। लेखक ने अपनी पुस्तक *'The Spirit of Laws'* में उल्लेख किया है कि प्रशासकीय कार्यों को राज्य द्वारा बनाये गये विनियमनों द्वारा निर्देशित किया जा सकता है न कि आवश्यक रूप से कानूनों द्वारा। रूसो (1712-1778) ने कहा था कि राज्य की गतिविधियाँ बढ़ने से राजनीति पर प्रशासन का विस्तार बढ़ता है। 18वीं सदी में शासकीय कार्यों के व्यवस्थित प्रबन्ध के साथ सम्बद्ध 'केमरलिज्म' की विचारधारा जर्मन विद्वानों की विशेष रुचि का क्षेत्र बन गयी थी। तत्पश्चात्, अमरीका में हैमिल्टन और टॉमस जैफरसन ने

लोक प्रशासन के कुछ पक्षों की ओर ध्यान आकर्षित किया। 1812 में फ्रेंच लेखक चार्ल्स जीन बोनिन ने *'लोक प्रशासन सिद्धान्त'* नामक इस विषय की पहली पुस्तक लिखी।

विल्सन युग—लोक प्रशासन के वर्तमान वैज्ञानिक स्थिति और एक स्वतन्त्र अध्ययन-विषय के रूप में इसका प्रारम्भ अमरीका के राष्ट्रपति वुडरो विल्सन से माना जाता है। 18वीं सदी में विल्सन के लोक प्रशासन सम्बन्धी दृष्टिकोणों ने विश्व के देशों को काफी प्रभावित किया। निस्सन्देह, विल्सन ने प्रथम लोक प्रशासन विचारक के रूप में कहा कि राजनीति और प्रशासन के कार्य अलग हैं। 1887 में वुडरो विल्सन द्वारा 'प्रशासन के अध्ययन' पर लिखा गया एक निबन्ध प्रकाशित हुआ जिसे इस अध्ययन क्षेत्र की प्रथम युग घटना माना जाता है। विल्सन के इस निबन्ध की विषय-वस्तु का उद्देश्य प्रशासन की राजनीति से अलग एक विषय के रूप में स्थापित करना था। उनके अनुसार कानून के क्रियान्वयन से प्रशासन घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। विल्सन ने बताया कि संविधान बनाने की अपेक्षा उसको चलाने का कार्य अधिक कठिन है। प्रारम्भ में सरकारी कार्यों के अध्ययन में वैज्ञानिक व्यवस्था और कानून के अनुशीलन पर बल दिया जाता था, किन्तु आर्थिक-सामाजिक जीवन में जटिलताएँ बढ़ने तथा राज्य के कार्यों में वृद्धि होने से अब यह आवश्यक हो गया है कि "प्रशासन के ऐसे विज्ञान का निर्माण किया जाये जो शासन के पथ को प्रशस्त करे····इसके संगठन को सुदृढ़ और विशुद्ध बनाये।" प्रो. वाल्डो ने विल्सन को "एक विद्या के रूप में लोक प्रशासन का जनक" माना है और यह सही है।[1] इस प्रकार इस निबन्ध को ही प्रशासन के व्यवस्थित अध्ययन का प्रारम्भिक आधार माना जाता रहा है।

तुलनात्मक दृष्टिकोण—यह रुचिकर है कि एक बार पुनः विल्सन को ही तुलनात्मक लोक प्रशासन का आरम्भ करने का श्रेय दिया जाता है। विल्सन के विचारों में हमें तुलनात्मक तत्व की झलक देखने को मिलती है। उनका तर्क था कि यूरोपीय प्रशासन की कुछ पद्धतियों को अमरीका में अपनाया जा सकता है। वे प्रथम तुलनात्मककर्ता थे, जिन्होंने अमरीकी शासन व्यवस्था का ब्रिटिश कैबिनेट व्यवस्था से तुलना की और बताया कि अमरीका के विभिन्न प्रशासन के क्षेत्रों में एकीकृत सत्ता का अभाव है। जब अमरीका प्रशासन की लूट-प्रणाली ने देश में राजनीतिक और प्रशासनिक उलझनें पैदा होने लगीं तो विल्सन का मत सार्थक प्रतीत होने लगा तथा नागरिक सेवा एवं प्रशासन के दूसरे क्षेत्रों में सुधार की योजनाएँ प्रस्तावित होने लगीं। साथ ही, इस समय में डॉर्मन बी. ईटन तथा अन्य मनीषियों ने अमरीका में ब्रिटिश प्रशासन की पद्धतियों को अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया। इस प्रकार प्रशासनिक अध्ययन में तुलनात्मक झलक आने लगी।

विल्सन द्वारा प्रस्तावित तुलनात्मक तालिका में निम्नलिखित विशेषताएँ देखने को मिलती हैं :

1. अमरीका में प्रशासन के विज्ञान को लोकतान्त्रिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जाना चाहिए।
2. एक अच्छी सरकार लोक प्रशासन के व्यावहारिकता की पर्यायवाची है।
3. शासन के प्रतिदिन कार्यों को करने वालों के लिए नागरिक समस्याएँ भी महत्वपूर्ण हैं।

---

1 D. Waldo : *The Study of Public Administration*, New York, Macmillan Company, p. 20.

4. प्रशासन का श्रेष्ठ मूल्यांकन प्रशासन से राजनीतिक पहलुओं को निकालकर ही सम्भव है।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में फ्रेडरिक टेलर ने 'वैज्ञानिक प्रबन्ध' के आन्दोलन का सूत्रपात करके अमरीका की प्रशासनिक विचारधारा के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण कदम उठाया था। टेलर द्वारा रचित *'वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त'* अमरीका में बृहत्तर उत्पादकता की चुनौती का प्रत्युत्तर थी। यह आन्दोलन क्रमशः एक अन्तर्राष्ट्रीय आन्दोलन बन गया। इसने न केवल अमरीका की प्रशासनिक विचारधारा को ही प्रभावित किया बल्कि सोवियत संघ आदि देशों के प्रशासनिक व्यवहार पर भी प्रभाव डाला। उस समय टेलर के प्रयास प्रशासनिक विज्ञान के विकास में बढ़ती हुई रुचि के अनुरूप थे। उसका दर्शन सजग, पर्यवेक्षण, निरीक्षण, परिमापन और सामान्यीकरण के वैज्ञानिक विधितन्त्र का एक सर्वोत्तम मार्ग स्वीकारा गया। टेलर के सिद्धान्त बड़े स्तर के उत्पादन के अनुकूल थे और इसलिए विभिन्न देशों का ध्यान इनकी ओर आकर्षित हुआ। प्रशासन में कार्यकुशलता और मितव्ययता पर बल दिया जाने लगा। स्वयं मैक्स वेबर ने भी वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्तों को औद्योगीकरण की आवश्यकताओं के अनुरूप पाया। 1920 से 1930 तक की लोक प्रशासन सम्बन्धी रचनाएँ प्रबन्धात्मक दृष्टिकोण से प्रभावित रही हैं। इनमें लोक प्रशासन के कुछ सार्वलौकिक सिद्धान्त खोजने के प्रयास किये गये जिससे इसे विज्ञान बनाया जा सके। ऐसे समस्त प्रयास तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास की भूमिकाएँ थीं।

1926 और 1927 में क्रमशः ह्वाइट और विलोबी की लोक प्रशासन पर दो महत्वपूर्ण पाठ्य-पुस्तकें प्रकाशित हुईं। इन पुस्तकों के अतिरिक्त लोक प्रशासन सम्बन्धी अन्य कृतियों में सामान्यतया प्रबन्धकीय दृष्टिकोण अपनाया गया और इसमें प्रशासन के कतिपय सार्वभौम सिद्धान्तों के वर्णन द्वारा प्रशासनिक विज्ञान के निर्माण के प्रयासों के प्रति आस्था व्यक्त की गयी। विलोबी आरम्भिक लोक प्रशासन के प्रस्तावकों में से रहा है। 1919 में उसने लिखा है कि प्रशासन "यद्यपि विज्ञान नहीं तो अध्ययन का ऐसा विषय अवश्य है जिसमें वैज्ञानिक प्रणाली का दृढ़ता के साथ उपयोग किया जाना चाहिए।"[1] बाद में उसने कहा है कि प्रशासन में सामान्य उपयोग के मौलिक सिद्धान्त उसी प्रकार के होते हैं जैसे कि किसी विज्ञान के होते हैं। उनका यह भी कथन था कि वैज्ञानिक पद्धतियों के प्रयोग से यह सिद्धान्त निर्मित किये जाने चाहिए। ह्वाइट महोदय ने सिद्धान्तों के संकर-सांस्कृतिक रूप पर बल दिया। उन्होंने तो यहाँ तक कहा है कि "एक परीक्षित परिकल्पना माना गया सिद्धान्त अपने उपर्युक्त सन्दर्भ में प्रयुक्त होकर ब्रिटेन, अमरीका, इराक, रूस सभी के लोक प्रशासन तन्त्रों हेतु उपयोगी मार्ग-दर्शक बन सकता है।"

बाद में, मानवीय सम्बन्धों के अध्ययनों ने प्रशासनिक व्यवहार के विश्लेषण में नये तत्व जोड़े तथा इस प्रकार अनौपचारिक संगठनों की कार्यप्रणाली से सम्बन्धित नवीन प्रस्थापनाओं का विकास हुआ। किन्तु इस क्षेत्र में आन्तरिक और बाह्य पर्यावरण के बीच पारस्परिक गतिशील सम्बन्धों के अध्ययन के लिए बहुत ही कम कार्य हुआ। अनेक कारणों

---

1 D. Waldo : "*Comparative Public Administration Performance and Problems*", Preston La Braton (ed.) : *Comparative Administrative Theory,* University of Washington Press, 1968 Quoted from, p. 94.

से मानवीय सम्बन्ध आन्दोलन में अन्तःसांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य विकसित नहीं किया जा सका।[1] द्वितीय विश्वयुद्ध के बीच एवं उसकी समाप्ति के बाद प्रशासनिक विचारधाराओं में नवीन परिवर्तन हुए। एडविन स्टीन, साइमन और वाल्डो जैसे विद्वानों ने प्रशासकीय साहित्य में अधिक वैज्ञानिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता पर जोर दिया। कुछ अन्य लेखकों ने लोक प्रशासन में अन्तःसांस्कृतिक विश्लेषणों के विकास का समर्थन किया। **राबर्ट डल** ने कहा कि "जब तक लोक प्रशासन का अध्ययन तुलनात्मक नहीं बनता लोक प्रशासन के विज्ञान बनने के दावे सारहीन से ही हैं।"[2] कुल मिलाकर लोक प्रशासन के प्रारम्भिक अध्ययन काल में हमें तुलनात्मक विवेचन की पृष्ठभूमि लेशमात्र प्राप्त होती है।

परम्परागत अध्ययनों से तुलनात्मक अध्ययन की ओर

सामान्यतया तुलनात्मक राजनीति के दो दृष्टिकोण के समान लोक प्रशासन के भी दो दृष्टिकोण माने जा सकते हैं :

(1) परम्परागत दृष्टिकोण,

(2) आधुनिक दृष्टिकोण, जिसमें संरचनात्मक-कार्यात्मक अध्ययन, व्यवहारवादी अध्ययन, राजनीतिक-सांस्कृतिक अध्ययन आदि विभिन्न दृष्टिकोण सम्मिलित हैं।

परम्परागत लोक प्रशासन के प्रारम्भिक अध्ययनों की विषय-वस्तु, अध्ययन प्रणाली, प्रयासों को और उसके बाद के कुछ प्रयासों को मोटे रूप में परम्परागत दृष्टिकोण का नाम दिया जाता है। प्रारम्भिक परम्परागत अध्ययन अपने ढंग में विवरणात्मक रहे थे न कि समस्या विश्लेषणात्मक। विद्वानों ने अपने आपको सिद्धान्तों के विकास परिकल्पनाओं के परीक्षण और महत्वपूर्ण आँकड़ों के संग्रहीकरण में न लगाकर अपने अध्ययन को पाश्चात्य औद्योगिक देशों तक ही सीमित रखा था। इनमें साम्यवादी तथा उपनिवेशों के प्रशासन का केवल प्रसंगवश ही कुछ उल्लेख होता था। परम्परागत लोक प्रशासन की विशेषताओं जैसे केन्द्रीय प्रशासन, नागरिक सेवा का ढाँचा, विकेन्द्रीकरण के रूप, लोक वित्त, वित्तीय प्रशासन, प्रशासनिक नियन्त्रण आदि तथा तुलनात्मक अध्ययन पर दिये गये न्यूनाधिक बल पर विचार करें तो हमें इस दृष्टिकोण के प्रति आधुनिक असन्तोष और साथ ही तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र में नवीनीकरण की आवश्यकता का भलीभाँति अनुभव हो सकेगा। तुलनात्मक राजनीतिक संस्थाओं का अध्ययन अब तक केवल नाममात्र से ही तुलनात्मक रहा है। अब तक यह केवल विदेशी सरकारों, उनके ढाँचे तथा औपचारिक संगठन का ऐतिहासिक, वर्णनात्मक वैधानिक अध्ययन ही रहा है जबकि तुलनात्मक लोक प्रशासन को सिद्धान्तों, ढाँचों और वास्तविक व्यवहार से भी अपना सम्बन्ध जोड़ना चाहिए। पुनश्चः अभी तक प्रवृत्ति मुख्यतः पाश्चात्य देशों के अध्ययन तक ही सीमित रहा है जबकि आवश्यकता इस बात की है कि नवीन विकसित प्रवृत्तियों का, राजनीतिक व्यवस्थाओं के पीछे कार्य कर रही व्यावहारिक शक्तियों का, विकासशील देशों की प्रशासनिक प्रक्रियाओं आदि का भी तुलनात्मक रूप से अध्ययन किया जाना आवश्यक है।

---

1 Arora, R. K. : *Comparative Public Administration* (Hindi), Rajasthan Hindi Granth Academy, Jaipur, 1975, p. 10.

2 Dahl, Robert : *The Science of Public Administration : Three Problems, Public Administration Review*, Section VII (1947), p. 11.

परम्परागत दृष्टिकोण की कुछ विशेषताएँ जैसे—मुख्यतः अतुलनात्मक, वर्णनात्मक, ऐतिहासिक, वैधानिक, संकुचित क्षेत्र, स्थिर एवं गतिहीन तथा मूलतः प्रबन्धात्मक होना है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की परिस्थितियों में इस दृष्टिकोण की आलोचना होने लगी। कुछ प्रमुख आलोचनाएँ निम्नलिखित हैं :

1. इस दृष्टिकोण में व्यावहारिक तत्वों की उपेक्षा;
2. दृष्टिकोण केवल वर्णनात्मक, तुलनात्मक नहीं;
3. दृष्टिकोण में अध्ययन का केन्द्र पाश्चात्य साहित्य तक ही सीमित;
4. अध्ययन की अन्तर-अनुशासनात्मक प्रवृत्तियों की उपेक्षा;
5. साहित्य पारम्परिक एवं सीमित;
6. अप्रशासनिक तथ्यों की उपेक्षा;
7. परिप्रेक्ष्य में पारिस्थितिकीय नहीं; तथा
8. औपचारिक एवं कानूनी।

उपर्युक्त आलोचनाओं के फलस्वरूप यह दृष्टिकोण व्यापक स्वरूप विकसित न कर सका और सैद्धान्तिक वर्णन पर जोर देने के कारण परम्परागत अध्ययन अधूरा ही रहा। वास्तव में इस पारम्परिक दृष्टिकोण में अन्तर-सांस्कृतिक, अन्तर-सामाजिक तथा पश्चिमी क्षेत्रों के प्रशासनिक तन्त्रों के अध्ययनों के लिए आवश्यक प्रत्ययों एवं रीति विज्ञान का भी अभाव था। इन्हीं सीमाओं पर दृष्टिपात कर रिग्स ने एक प्रासंगिक प्रश्न उठाया है कि क्यों न इस पुरानी सामग्री को 'तुलनात्मक शासनों' का अध्ययन करने के स्थान पर 'विदेशी सरकारों' का अध्ययन कहा जाय ?[1] रिग्स का यह कथन परम्परागत अध्ययनों में वास्तविक तुलनात्मक तत्वों के अभाव की ओर ध्यान आकर्षित करता है। उपरोक्त आलोचनाओं के बावजूद यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि यह दृष्टिकोण कोई महत्व नहीं रखता। वस्तुतः प्रत्येक ज्ञान अपने प्रारम्भिक विकास के समय सीमित और संकुचित ही होता है। यह बात प्रारम्भिक तुलनात्मक साहित्य पर लागू होती है। यह प्रारम्भिक चिन्तन, व्यवहार और तथ्यों की अपेक्षा सिद्धान्त और दार्शनिक विवेचन से अधिक प्रभावित था। प्रारम्भ में अमरीका और ब्रिटेन के विचारकों के अतिरिक्त बहुत कम विद्वानों ने शासनतन्त्र के सम्बन्ध में गहन विचार करने का प्रयास किया है। अतः पश्चिमी राष्ट्रों में विकसित प्रशासनिक सिद्धान्तों पर इन देशों में प्रचलित मूल्यों व मान्यताओं की छाप पड़ना स्वाभाविक ही था। साथ ही, यह नहीं भूलना चाहिए कि राजनीतिक विज्ञान के विषय पर चिरकाल से राजनीतिक दर्शन का प्रभुत्व रहा है। इस प्रभाव के कारण राजनीति विज्ञान की कृतियों में आदर्शात्मक तत्वों का प्रभुत्व रहा है। इसके अतिरिक्त प्रारम्भ में यूरोपीय देशों के साम्राज्यों का जाल-सा फैला हुआ था और एशिया और अफ्रीका में विकासशील देशों की संख्या बहुत कम थी। यह भी उल्लेखनीय है कि इस काल में सामाजिक विज्ञानों की शोध-पद्धति आज के समान विकसित नहीं थी। अतः प्रशासनिक अनुसन्धान की प्रकृति आज की तुलना में कम वैज्ञानिक थी। यह भी समझना

---

1 Riggs, F. : *Trends in the Cooperative Studies of Public Administration, International Review of Administrative Sciences*, Section 28, 1962, p. 13, Quoted in R. K. Arora's Book, *op. cit.*, 1997, p. 12.

आवश्यक है कि प्रारम्भिक तुलनात्मक अध्ययन उस उदार लोकतान्त्रिक पर्यावरण को प्रतिध्वनित करते थे जिसमें कि उनका विकास हुआ था। इनमें विशिष्ट पर्यावरणिक स्थितियों में काम कर रहे विशिष्ट समाजों की समस्याओं को प्रतिबिम्बित करने की रुचि दिखायी देती है। इसलिए उनको 'आदर्शात्मक' कहकर उनकी आलोचना करना राजनीतिक प्रशासनिक विचार के विकास की पारिस्थितिकी की उपेक्षा करना ही होगा। वस्तुतः इन अध्ययनों को इनके द्वारा किये गये योगदान के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। इन अध्ययनों के कारण ही कतिपय महत्वपूर्ण परिकल्पनाओं का जन्म हुआ जिन्हें बाद में परीक्षित, संशोधित या अस्वीकृत किया गया, और इस प्रकार इस प्रक्रिया ने प्रशासनिक विज्ञान के विकास को बल प्रदान किया।[1] इस प्रकार यह परम्परागत अध्ययन जिन परिस्थितियों में विकसित हुए उनमें जो कुछ सम्भव था वही अपनाया गया।

परम्परागत अध्ययन ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास को सम्भव बनाया, प्रोत्साहित किया और एक उचित पृष्ठभूमि प्रदान की। सत्ता, नियन्त्रण, संचार, नियोजन, संगठन, समन्वय, कार्यकुशलता और मितव्ययता आदि परम्परागत प्रशासनिक अवधारणाएँ तुलनात्मक लोक प्रशासन के वर्तमान विद्यार्थियों के लिए पर्याप्त महत्व रखती हैं।[2] इसी प्रकार शासनतन्त्रों पर वर्णनात्मक सामग्री को प्रशासनिक विश्लेषण का आरम्भ माना जाना चाहिए। संक्षेप में, परम्परावादी दृष्टिकोण ने इस विषय को विकसित करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

जब परम्परागत दृष्टिकोण पर आधारित अध्ययन तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से असन्तोषजनक सिद्ध हुए, तब इस दिशा में नवीन विश्लेषणों और अध्ययनों की आवश्यकता महसूस हुई और नवीन दृष्टिकोणों की खोज प्रारम्भ हुई। फलस्वरूप विश्लेषण, निरीक्षण और परीक्षण की जो नवीन पद्धतियाँ विकसित हुईं उन्हें आधुनिक दृष्टिकोण का नाम दिया गया। इस प्रकार लोक प्रशासन के तुलनात्मक अध्ययन को अधिकाधिक 'वैज्ञानिक स्वरूप' प्रदान करने के लिए जिन विद्वानों ने परम्परागत दृष्टिकोण के लेखकों से भिन्न दृष्टिकोण अपनाया है, उसे आधुनिक दृष्टिकोण के नाम से जाना जाता है। इस दृष्टिकोण के समर्थकों ने पश्चिमी और गैर-पश्चिमी प्रशासनिक व्यवस्थाओं को सम्मिलित कर विस्तृत बनाने का प्रयास किया। आधुनिक दृष्टिकोण अधिक परीक्षण करने वाला, अधिक खोजबीन और अधिक व्यवस्थित है। इसमें राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक-सामाजिक घटनाओं के बीच सहसम्बन्धों की स्थापना वास्तव में एक ऐसा व्यापक क्षेत्र प्रदान करती है जिसके सन्दर्भ में परिवर्तनों की गतिशीलता को हम भली प्रकार समझ सकते हैं और विस्तृत सामान्यीकरण प्राप्त कर सकते हैं। परम्परागत दृष्टिकोण में यह सब कुछ सम्भव न होने के कारण ही आधुनिक दृष्टिकोण प्रस्तुत हुआ जो अपनी बहुमुखी विशेषताओं और विशिष्ट पहुँच के कारण वर्तमान प्रशासनिक प्रक्रियाओं की उलझी गुत्थियों को सुलझाने में बड़ा सहायक है।

आधुनिक दृष्टिकोण में निम्नलिखित अध्ययन सम्मिलित हैं :

1. सामाजिक सन्दर्भ जनित अध्ययन,
2. व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक अध्ययन,

---

1 Ramesh Arora : *op. cit.*, 1997, pp. 11-12.

2 T. N. Chaturvedi : *op. cit.*, p. 14.

3. विश्लेषणात्मक अध्ययन,
4. व्यवस्था अध्ययन,
5. अन्तर-अनुशासनात्मक अध्ययन,
6. संरचनात्मक-कार्यात्मक अध्ययन।

लोक प्रशासन के अध्ययन में उपरोक्त दृष्टिकोणों का उपयोग किया जाता है।

तुलनात्मक अध्ययन का प्रारम्भ

तुलनात्मक लोक प्रशासन की प्रकृति में निरन्तर परिवर्तन आता रहा है। लोक प्रशासन का जर्मन कैमरेलिज्म से प्रारम्भ होने वाला स्वरूप, टेलरवाद एवं वैज्ञानिक प्रबन्ध आदि तुलनात्मक नहीं थे। प्रारम्भ में तुलनात्मक सरकारों के अध्ययन का ही भाग तुलनात्मक लोक प्रशासन था। यह संस्कृतिबद्ध, आदर्शात्मक, अपारिस्थितिकीय तथा एकांगी था। द्वितीय विश्वयुद्ध और उसके बाद की परिस्थितियों ने विश्व के प्रायः सभी भागों में लोक प्रशासन के समक्ष अनेक गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न कर दीं। इन समस्याओं के समाधान के प्रयास में लोक प्रशासन का रूप बदल गया, उसकी प्रकृति में परिवर्तन आया और वह अधिक संघर्षशील बन गया। इसी अर्थ में द्वितीय विश्वयुद्ध के काल को लोक प्रशासन के पुराने और नये अध्ययन के बीच की विभाजक रेखा माना जाता है। इस बीच अमरीकी विद्वानों द्वारा अनेक तुलनात्मक अध्ययन किये गये। इन अध्ययनों ने लोक प्रशासन को एक विश्वव्यापी विज्ञान बनाने में उल्लेखनीय कार्य किया। दूसरी तरफ परम्परावादी दृष्टिकोण के प्रति व्याप्त असन्तोष और अनेक परिस्थितियों ने तुलनात्मक लोक प्रशासन को विकसित करने में सहयोग प्रदान किया। जिन प्रमुख कारणों ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास में योगदान दिया, वे निम्नलिखित हैं :

1. द्वितीय विश्वयुद्ध के समय विकासशील देशों सहित अन्य देशों को अमरीका, ब्रिटेन आदि विकसित देशों के प्रशासकों एवं विद्वानों का लोक प्रशासन सम्बन्धी परिचय प्राप्त हुआ। उन्हें वहाँ की प्रशासनिक व्यवस्था में अनेक विशेषताएँ और नवीनताएँ दिखायी दीं। फलस्वरूप उनमें एक तुलनात्मक विवेचन की रुचि जाग्रत हुई।
2. युद्ध के बाद परिवर्तित परिवेश में नये उद्योग-धन्धे और उद्यम प्रारम्भ हुए। नवीन विचारधारा, विज्ञान, तकनीक के क्षेत्र में हुए नवीन विकासों और प्रशासन की रूपरेखा को पर्याप्त रूप से प्रभावित किया और तुलनात्मक अध्ययन का सूत्रपात हुआ।
3. द्वितीय विश्वयुद्ध की एक महत्वपूर्ण देन थी अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और समन्वय की भावना का विकास। विभिन्न राष्ट्र विकास के लिए दूसरे राष्ट्रों पर निर्भर होने लगे। यह निर्भरता आर्थिक, औद्योगिक, तकनीकी क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रही, बल्कि प्रशासकीय क्षेत्र में भी देखने को मिलती है। इस अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और समन्वय के फलस्वरूप उत्पन्न हुई इच्छा ने तुलनात्मक लोक प्रशासन को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।
4. तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र में अधिक अध्ययन की प्रेरणा विचारकों की इस आकांक्षा ने दी कि इस विषय को एक स्वतन्त्र अनुशासन के रूप में विकसित किया जाय।

5. 1947 में **राबर्ट ए. डल** ने कहा कि "जब तक लोक प्रशासन का अध्ययन तुलनात्मक नहीं होगा तब तक वह विज्ञान नहीं माना जा सकता।" अतः लोक प्रशासन को वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरा उतारने के लिए लोक प्रशासन के तुलनात्मक अध्ययन को महत्व दिया जाने लगा।
6. तुलनात्मक दृष्टिकोण का विकास लोक प्रशासन की विषय-वस्तु के व्यवस्थित स्पष्टीकरण के लिए उपयोगी माना गया है। सम्भवतः तुलनात्मक दृष्टिकोण के बिना प्रशासनिक संस्थाओं का सही अर्थ समझना सम्भव नहीं है। **एडवर्ड शिल्स** की मान्यता है कि "विभिन्न समाजों की व्यवस्थित तुलना करके उनकी समरूपता एवं विलक्षणताओं को इंगित और स्पष्ट किया जा सकता है।" अतः लोक प्रशासन की विषय-वस्तु के व्यवस्थित स्पष्टीकरण हेतु भी तुलनात्मक दृष्टिकोण का विकास उपयोगी था।
7. नवोदित राष्ट्र ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, भौगोलिक परिस्थिति, जनसंख्या, आकार, सामाजिक रूप-रचना, आर्थिक विकास आदि की दृष्टि से अनेक असमानताएँ रखते हैं। इन असमानताओं के कारण सामाजिक विश्लेषण में तुलनात्मक अध्ययन की अनेक समस्याएँ उठती हैं जिनके फलस्वरूप तुलनात्मक लोक प्रशासन में सन्दर्भ के रूप में तथा पारिस्थितिकीय प्रवृत्तियों के अध्ययन का महत्व बढ़ गया है। इस क्षेत्र में अनेक नवीन मॉडल, दृष्टिकोण और अध्ययन के तरीके विकसित हुए हैं।
8. जब सामाजिक विज्ञानों में व्यवहारवादी क्रान्ति हो रही थी और ज्ञान के व्यावहारिक पहलू पर जोर दिया जा रहा था, लोक प्रशासन में भी व्यक्ति के वास्तविक व्यवहार को अध्ययन का केन्द्र बनाया जाने लगा। अब वैधानिक और औपचारिक दृष्टिकोण में अन्तर आया है। फलस्वरूप तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन को नवीन दिशाएँ मिलीं।
9. प्रशासन और समाज के घनिष्ठ सम्बन्ध ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी, क्योंकि प्रत्येक देश की प्रशासनिक संरचना वहाँ के सामाजिक ढाँचे को निश्चित रूप से प्रभावित करती है। यदि किसी एक देश की प्रशासकीय संरचना और प्रक्रिया को दूसरे देश में लागू करना है तो अपनाने के पूर्व दूसरे देश की सामाजिक और राजनीतिक संरचना को जानना आवश्यक है। इस प्रकार इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए तुलनात्मक लोक प्रशासन का दृष्टिकोण आवश्यक बन गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वातावरण, परिस्थिति, उपयोगिता, समय की चुनौतियाँ, दृष्टिकोण तथा विचारकों की मान्यताओं के कारण तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास को प्रोत्साहन मिला। अब इस क्षेत्र में अनेक नवीन विकास विकसित हुए हैं। विचारकों ने महत्वपूर्ण साहित्य की रचना की है। अतः उपरोक्त कारणों ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास में सहयोग प्रदान किया है।

तुलनात्मक विश्लेषण की आवश्यकता क्यों ?

राजनीति विज्ञान के एक लेखक का यह कथन कि "बिना तुलना के वैज्ञानिक होना सम्भव नहीं है, अर्थपूर्ण है।" किसी भी प्रशासनिक व्यवस्था को आद्योपान्त भली प्रकार तभी

समझा जा सकता है जब दूसरी प्रशासनिक व्यवस्था का भी अध्ययन किया जाये। तुलनात्मक विश्लेषण और अध्ययन के द्वारा यह सम्भव है कि हम कुछ ऐसे सामान्य निष्कर्ष निकाल सकें जो सामान्यतया सभी जगह लागू होते हों। इस प्रकार एक देश की समान प्रशासनिक व्यवस्था की तुलना दूसरे देश की प्रशासनिक व्यवस्था से की जा सकती है। जब हम यह कहते हैं कि एक देश का प्रशासन राजनीतिक कार्यपालिका की 'रबड़ मोहर' हो गया है, अर्थहीन बयान है, जब तक साथ में यह न कहा जाय कि ऐसी ही स्थिति दूसरे देशों की भी है। हम प्रायः ऐसे बयानों को सुनते हैं कि 'अ' देश का प्रशासन बहुत भ्रष्ट हो गया है परन्तु किसकी तुलना में ? 'ब' या 'स' देश की तुलना में। अतः ऐसे बयानों का महत्व तभी तक औचित्यपूर्ण है जब तक उसकी तुलना नहीं की जाती। अतः प्रशासन की प्रक्रिया के सम्बन्ध में हमारे विचार बहुत सीमा तक स्पष्ट हो जायेंगे यदि हम स्वयं से प्रश्न करें कि, तुलना किससे।

राबर्ट डल का मत है कि यदि लोक प्रशासन की कोई संकल्पना प्रमाणित है तो उसे तीन समस्याओं को ध्यान में रखना होगा :

(अ) लोक प्रशासन की अन्तर्निहित मानकीय मंशा;

(ब) विज्ञान के रूप में लोक प्रशासन का अध्ययन मानव व्यवहार के अध्ययन पर आधारित हो; और

(स) जब तक लोक प्रशासन का अध्ययन तुलनात्मक नहीं है, उसे वैज्ञानिक कहना हास्यास्पद है।

यह ध्यान रखने योग्य है कि तुलनात्मक पद्धति की कुछ सीमाएँ होती हैं। यह पद्धति सार्वभौमिक नहीं है जहाँ सबसे तुलना की जा सके। जो तुलना योग्य है उसी से तुलना की जा सकती है। तुलना की अभिसीमा का निश्चय साधारणतः सैद्धान्तिक योजना, समस्या के निर्माण अथवा एक देय क्षेत्र-विशेष के अध्ययन से होता है। प्रायः सभी मामलों में दो कठिन प्रश्नों का सामना करना पड़ता है। प्रथम हम तुलना कैसे करें ? एवं द्वितीय, हम किन बातों की तुलना करें। आमतौर से तुलना समान व्यवस्थाओं, समस्याओं एवं प्रणालियों की समानता के बीच ही की जा सकती है। जैसे भारतीय प्रशासन की तुलना ब्रिटिश प्रशासन से की जा सकती है न कि रूस और चीन के प्रशासन से। विषय को सही परिवेश और उसे वैज्ञानिकता प्रदान करने के लिए तुलना आवश्यक है।

तुलना स्थिर (Static) और गत्यात्मक (Dynamic) दोनों हो सकती हैं। स्थिर तुलना में हम एक प्रकार से प्रशासनिक व्यवस्थाओं की शल्य-क्रिया करते हैं। संरचनाओं का वर्णन किया जाता है और उनका सम्बन्ध जोड़ा जाता है। गत्यात्मक या गतिशील तुलना विभिन्न व्यवस्थाओं के कार्यों का अध्ययन है। हम केवल उन संरचनाओं का ही समीकरण अथवा निर्धारण नहीं करते जिनके माध्यम से निश्चित कार्य किये जाते हैं बल्कि विभिन्न व्यवस्थाओं के बीच पायी जाने वाली संरचनात्मक विभिन्नताओं को भी ध्यान में रखते हैं और तब अन्त में कार्य के वैकल्पिक मार्गों के परिणाम खोजने का प्रयत्न करते हैं।

तुलना का सन्देश स्पष्ट और महत्वपूर्ण है। लोक प्रशासन के अध्ययन के सम्बन्ध में यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रशासनिक व्यवहार और सम्बन्ध भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में अलग-अलग प्रकार के होते हैं। राजनीति विज्ञान के समान लोक प्रशासन की प्रकृति तुलनात्मक है। हमारी तुलना करने का केन्द्र-बिन्दु विभिन्न प्रशासनिक संगठन, क्षेत्र, प्रशासनिक

प्रणाली, आदि हो सकते हैं। रूपरेखा का प्रकार कैसा भी हो, लोक प्रशासन को समझने के लिए तुलना अनिवार्य है। दूसरे, विज्ञान का एक आवश्यक आयाम तुलना है। तुलना से वैज्ञानिक ज्ञान का विकास होता है और यह संकल्पना निर्माण का आधार है। तीसरे, तुलना वर्गीकरण दृष्टि से आवश्यक है। संगठनों का वर्गीकरण करके ही विभिन्न संगठनों के विविध पहलुओं की तुलना की जाती है। चौथे, तुलना आगमन का एक आवश्यक भाग है। इसमें पहले तथ्यों को एकत्र किया जाता है, तथ्यों की तुलना की जाती है और फिर निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। इस प्रकार आगमन में विशिष्ट तथ्यों से सामान्य सिद्धान्त की ओर बढ़ते हैं।

आर. सी. मैक्रीडिस तथा **बर्नार्ड ई. ब्राउन** (R. C. Macridis and Bernard E. Brown) ने लिखा है कि एक राजनीतिक व्यवस्था में विभिन्न परस्पर विरोधी दावों और माँगों को स्वीकृत निर्णयों (Accepted Decisions) में परिवर्तित किया जाता है।[1] इस प्रकार के जो भी निर्णय होते हैं उनमें विभिन्न और बहुरूपी सामाजिक समूहों, दलों, संघर्षों, हित-संगठनों और क्षेत्रों के परस्पर विरोधी विचारों में सामंजस्य निहित होता है। एक ओर तो व्यवस्थापिका, कार्यपालिका, न्यायालय और नौकरशाही के रूप में सरकारी अंग होते हैं तथा दूसरी ओर सामाजिक एवं आर्थिक प्रक्रिया और समूह होते हैं तथा वे विश्वास और मूल्य होते हैं जो समाज के सदस्य अपनी राजनीतिक व्यवस्था के बारे में रखे हुए हैं। इन सरकारी अंगों सामाजिक-सांस्कृतिक आर्थिक-नैतिक समूहों तथा विचारधाराओं के बीच जो अन्तःक्रियाएँ होती रहती हैं, उन्हीं के आधार पर राजनीति की गतिशीलता अथवा संचालक-शक्ति (Dynamics of Politics) का निर्माण होता है अर्थात् हम निर्णय करने की स्थिति में पहुँच जाते हैं। समाज में जो विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और नैतिक समूह तथा अन्य हित-संगठन होते हैं वे सरकार पर अपने दावों के समर्थन में दबाव डालते हैं। हित-समूहों और राजनीतिक दलों का इस दृष्टि से आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था में बड़ा महत्व होता है कि वे निर्णयों और हित-दावों के बीच तालमेल अथवा सामंजस्य बैठाने का कार्य करते हैं। राजनीतिक नेतृत्व इन दावों और माँगों में सामंजस्य लाने और उन्हें सरकारी निर्णयों के रूप में स्पष्टता प्रदान करने का प्रयत्न करता है। राजनीतिक व्यवस्था की कुशलता वस्तुतः ऐसी निर्णयकारी योग्यता में सन्निहित है जिसे व्यापक रूप में मान्यता मिल सके अर्थात् जिसके निर्णयों को अधिकांशतः स्वीकार किया जाये।

यह सर्वथा सम्भव है कि विभिन्न हितों और विचारधाराओं के संघर्ष और मतभेद बहुत गहरे हों तथा विरोधी पक्ष समान रूप से सन्तुलित हों। इस स्थिति में कोई भी राजनीतिक व्यवस्था स्वयं को एक ऐसी विषम परिस्थिति में फँसा हुआ पायेगी जहाँ उसके लिए कोई भी निर्णय करना बहुत ही कठिन होगा, अथवा किन्हीं परिस्थितियों में असम्भव-सा होगा। स्पष्ट है कि यह स्थिति उस राजनीतिक व्यवस्था के लिए बहुत कुछ "गतिहीनता अथवा निश्चलता" (Immobility) की स्थिति होगी। किसी भी लोकतान्त्रिक व्यवस्था में निर्णयों की व्यापकता का निश्चय इसी बात से किया जा सकता है कि समाज में उपस्थित विभिन्न हित समूह और ऐच्छिक संघ उन निर्णयों के सम्बन्ध में कहाँ तक अनुकूल विचार और व्यवहार प्रदर्शित करते हैं। यदि हम एक सर्वाधिकारवादी व्यवस्था (Totalitarian System) को लें तो उसमें भी अन्तिम निर्णय की कसौटी तो यही होगी कि अधिकांश जनता शासन के प्रति कहाँ तक सहमत

1 Macridis & Brown (ed.) : *Comparative Politics—Notes and Readings*, pp. 1-3.

है। किसी भी अतिवादी सरकार को जो जन-आकांक्षाओं का निरादर करने पर तुली रहे, जनता एक-न-एक दिन अवश्य उखाड़ फेंकेगी।

एक कुशल और प्रभावशील राजनीतिक व्यवस्था वही है जो परिवर्तनों और स्थायित्व के बीच सन्तुलन बनाये रखे। परिवर्तनशील परिस्थितियों और माँगों का समाज में उठते रहना स्वाभाविक है। परिवर्तन उन निरन्तर माँगों और दावों का परिणाम है जो तकनीकी और आर्थिक दशाओं के विकास के फलस्वरूप सामाजिक समूहों द्वारा किये जाते हैं। जब कभी सामाजिक अथवा आर्थिक समूह या अन्य हित समूह एवं संगठन प्रभाव और शक्ति ग्रहण करने में सफल हो जाते हैं तो वे अपने हितों के अनुरूप अपने विभिन्न दावे (Claims) प्रस्तुत करते हैं। इस स्थिति में किसी भी राजनीतिक अवस्था की कुशलता इस बात पर निर्भर है कि वह बिना किसी प्रकार की गड़बड़ी या अव्यवस्था उत्पन्न किये इन विभिन्न दावों से किस प्रकार अनुकूलन करती है। दूसरे शब्दों में, राजनीतिक व्यवस्था की प्रभावशीलता और बुद्धिमानी की कसौटी इस बात में निहित है कि सम्भावित परिवर्तनों और वर्तमान स्थायित्व के बीच सन्तुलन रखने में कहाँ तक सफल होती है। यदि हम इतिहास के पृष्ठ उलटें तो देखेंगे कि सम्पूर्ण उन्नीसवीं शताब्दी में निम्न मध्यम वर्ग और श्रमिक अपने मताधिकार के लिए और राजनीतिक परतन्त्रता से अपनी मुक्ति के लिए विभिन्न माँगें प्रस्तुत करते रहे और इस प्रकार उन्होंने इस सम्पूर्ण शताब्दी में एक के बाद एक राजनीतिक परिवर्तन की स्थिति उत्पन्न कर दी। कालान्तर में राजनीतिक व्यवस्थाओं को श्रमिकों और मध्यम वर्ग की इन माँगों से उपयुक्त सामंजस्य बैठाना ही पड़ा। जहाँ कहीं यह सामंजस्य नहीं हो सका अथवा माँगों को स्वीकार करने में या उनसे तालमेल बैठाने में कठिनाई पैदा हुई अथवा गम्भीर गतिरोध उत्पन्न हुआ वहीं समाज में क्रान्ति और उथल-पुथल के लक्षण प्रकट हो गये। जहाँ कहीं स्थिति अधिक गम्भीर हो गयी वहाँ क्रान्ति का विस्फोट हो गया।

वास्तव में यह स्वाभाविक है कि ज्यों-ज्यों समाजों का औद्योगीकरण होता है, विभिन्न समूह इस दृष्टि से संगठित होते जाते हैं कि अपने नवोपार्जित राजनीतिक प्रभाव को वे सामाजिक और आर्थिक लाभों के रूपों में परिणत कर सकें। अतः कुशलता इस बात पर निर्भर करती है कि सरकार का रुख इन समूहों की माँगों के प्रति क्या रहता है। यदि वर्तमान संस्थाएँ इन माँगों की पूर्ति में अथवा इनसे सामंजस्य बैठाने में असमर्थ सिद्ध होती हैं तो नये समूह क्रान्तिकारी ढंग से शक्ति ग्रहण करने का प्रयत्न कर सकते हैं जिसका सम्पूर्ण व्यवस्था पर बुरा और विनाशक प्रभाव पड़ना अस्वाभाविक नहीं है।

यदि उपर्युक्त दृष्टिकोण को ध्यान में रखा जाये तो भी हम सुनिश्चित रूप में यह नहीं कह सकते कि एक प्रजातान्त्रिक व्यवस्था अवश्यमेव एक पूर्णाधिकारवादी व्यवस्था से अधिक कुशल और उत्तम होगी। पूर्णाधिकारवादी व्यवस्था भी ऐसे तरीके निकाल सकती है कि समाज के शक्तिशाली समूहों की उपयुक्त सुनवाई हो सके। एक प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में यह सर्वथा सम्भव है कि उनकी प्रतिनिधि संस्थाएँ समान रूप से शक्तिशाली एवं प्रतियोगी समूहों के दावों से अनुकूलन करने वाले समुचित निर्णय न करें अथवा एक सन्तोषजनक समन्वयपूर्ण स्थिति न ला सकें। वस्तुतः दोनों ही व्यवस्थाओं में नेतृत्व अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। आधारभूत रूप से नेता कुछ समूहों की तरफ निर्णय करता है और उसके ये निर्णय प्रायः दूसरे कमजोर समूहों की इच्छा की कीमत पर होते हैं। फिर भी वह किसी ऐसी नीति या निर्णय को नहीं लाद सकता जो वर्तमान शक्ति-सन्तुलन की रेखा से बाहर हो।

आज के युग में एक राजनीतिक व्यवस्था को शक्तिशाली चुनौतियाँ आर्थिक और तकनीकी आधुनिकीकरण से है। अविकसित देशों के आधुनिकीकरण में समाज के पुनर्निर्माण का तत्व निहित है। इन देशों में व्यवहार के नये रूपों, कुशल नौकरशाहों के प्रशिक्षण, नव-स्थापित उद्देश्यों के आधार पर क्रान्तिकारी निर्णय आदि का पर्याप्त महत्व होता है। राजनीतिक स्तर पर आधुनिकीकरण में इन उद्देश्यों और बड़ी संख्या में लोगों के विचारों की अनुरूपता आवश्यक होती है। उपलब्ध साधन की कमी के कारण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अनुशासित प्रयत्न (Disciplined Effort) बहुत महत्वपूर्ण होते हैं और सबसे अधिक मानव-श्रम पर निर्भर करना पड़ता है जिसकी प्रभावकारी उपयोगिता बलिदान तथा अथक परिश्रम की माँग करती है। समाज विचारधाराओं और मूल्यों में परिवर्तनों के दौर से गुजरते हैं। यह हो सकता है कि अविकसित समाज अथवा राष्ट्र आर्थिक व्यक्तिवाद के यूरोपीय ढंग का अनुसरण करें अथवा शक्ति तथा असैद्धान्तिकवाद पर आधारित सामूहिक प्रयत्न के साम्यवादी ढंग पर चलें। उनकी पसन्द ही अधिकांशतः उनकी भावी और उदीयमान राजनीतिक संस्थाओं के स्वरूप का निश्चय करने वाली सिद्ध होती हैं। उन समाजों के लिए जो औद्योगीकरण के ऊँचे स्तर को प्राप्त कर चुके हैं, आधुनिकीकरण की समस्याएँ स्वभावतः भिन्न-भिन्न हैं। आर्थिक रूप से प्रगतिशील व्यवस्थाओं में सबसे मुख्य और विकट समस्या आर्थिक विकास की दर को निरन्तर बनाये रखना, श्रम की उत्पादकता में वृद्धि के लिए तकनीकी ज्ञान का तीव्र एवं प्रभावकारी विकास करना तथा लोगों के कल्याण और रहन-सहन के जीवन-स्तर को निरन्तर उन्नत बनाये रखने के लिए वृद्धिगत उत्पादकता के लाभों को सभी लोगों को उपलब्ध कराना है। सरकारों के लिए यह आवश्यक है कि वे आय-वितरण के विभिन्न उपायों से, सेवाओं के व्यापक प्रसार और सामाजिक न्याय के अधिकाधिक विस्तार में समाज में सन्तोष बनाये रखें।

हम उपर्युक्त सभी बातों, अवधारणाओं, कर्तव्य-निर्देश और तत्वों का भलीभाँति अध्ययन और उनकी परीक्षा तभी कर सकते हैं जब तुलनात्मक विश्लेषण और अध्ययन का मार्ग अपनायें।

तुलनात्मक शोध आन्दोलन

परम्परावादी दृष्टिकोण के प्रति व्याप्त असन्तोष और अनेक अनुकूल परिस्थितियों ने तुलनात्मक लोक प्रशासन को जन्म दिया। प्रारम्भ में तुलनात्मक सरकारों के अध्ययन का ही भाग तुलनात्मक लोक प्रशासन था। यह संस्कृतिबद्ध, आदर्शात्मक, अपारिस्थितिकीय और एकांगी था। व्यवहारवादी आन्दोलन ने उसे अधिक वैज्ञानिकता प्रदान की। इसके पश्चात् तुलनात्मक लोक प्रशासन ने तुलनात्मक राजनीतिक आन्दोलन का अनुगमन किया। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद राजनीतिक प्रणालियों के तुलनात्मक अध्ययन में अधिक रुचि उत्पन्न हुई। तृतीय विश्व की विकासशील राजनीतिक व्यवस्थाओं के विकास के कारण तथा बढ़ते हुए अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, तकनीकी आदि सहयोग के कारण विभिन्न देशों की राजनीतिक और प्रशासनिक संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन उपयोगी बन गया। इस प्रकार, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के समय में तुलनात्मक राजनीति में होने वाली घटनाओं ने उदीयमान तुलनात्मक लोक प्रशासन को प्रभावित किया। तुलनात्मक राजनीतिक आन्दोलन के उदय में पहला प्रभावशाली प्रयास 1953 में अमरीका में स्थित सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान परिषद ने तुलनात्मक राजनीति पर ग्रीष्मकालीन गोष्ठी का आयोजन करके किया। तभी परिषद

ने तुलनात्मक राजनीति समिति की स्थापना की जिसने तुलनात्मक राजनीति विषय के विकास में और अन्य सम्बन्धित क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। तुलनात्मक राजनीतिक संस्थाओं का अध्ययन ग्रेबियल ऑलमण्ड, लियोनार्ड बिण्डर, जेम्स कोलमैन, जोसेफ ला पालोम्बरा, ल्यूशियन पाई आदि विद्वानों द्वारा किया गया। 1952 में समाज विज्ञान शोध परिषद के तत्वावधान में तुलनात्मक राजनीति पर एक विचारगोष्ठी का आयोजन किया गया। समाज विज्ञान शोध परिषद में तुलनात्मक राजनीति पर एक समिति बनायी गयी। इन सभी ने तुलनात्मक राजनीति और अन्य सम्बन्धित विषयों के विकास में महत्वपूर्ण कार्य किया। परन्तु 1962 तक प्रशासन को राजनीतिक गतिविधि का एक हिस्सा मात्र माना जाता रहा। प्रशासन व्यवस्था राज व्यवस्था की उपव्यवस्था मात्र थी। इसी कारण ऑलमण्ड ने बताया है कि तुलनात्मक राजनीति से सूक्ष्म, परिशुद्ध एवं ठोस विषय-सामग्री लेने के लिए तैयार रहना चाहिए।

तुलनात्मक राजनीति और तुलनात्मक लोक प्रशासन अध्ययन की विषय-वस्तु की समरूपता के कारण घनिष्ठ वैचारिक सम्बन्ध हैं। राजनीतिक प्रणाली और प्रशासनिक प्रणाली के बीच सीमा रेखा अत्यन्त पतली है। किसी देश की राजनीतिक व्यवस्था का समुचित अध्ययन करने के लिए वहाँ की प्रशासनिक व्यवस्था का विवेचन करना अनिवार्य बन जाता है। इसका महत्वपूर्ण विषय नौकरशाही है। जब तक किसी देश की नौकरशाही का समुचित अध्ययन नहीं किया जाता तब तक वहाँ की राजनीतिक व्यवस्था को समझना सम्भव नहीं है। इस दृष्टिकोण के फलस्वरूप नौकरशाही को राजनीतिक प्रणाली की महत्वपूर्ण उप-प्रणाली मानने की परम्परा का प्रचलन हुआ। दूसरी ओर यह भी सत्य है कि जब तक एक देश की राजनीतिक व्यवस्था के रूप, संगठन, कार्य आदि का अध्ययन नहीं किया जाता तब तक वहाँ के प्रशासन की पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं हो पाती। इस सम्बन्ध में **एल्फ्रेड डायमण्ट** का कथन सत्य है कि "तुलनात्मक लोक प्रशासन के विद्यार्थी तुलनात्मक राजनीति में लोक प्रशासन से सम्बन्धित ठोस सामग्री और अनुसन्धान पद्धति सम्बन्धी परिष्कृत ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।"[1] नीति की आवश्यकताओं और बाह्य बौद्धिक वातावरण के अतिरिक्त तुलनात्मक लोक प्रशासन आन्दोलन के संगठन ने भी तुलनात्मक प्रशासनिक विश्लेषण के विकास की प्रक्रिया को प्रभावित किया है। इस प्रकार, निस्सन्देह, राजनीतिशास्त्र और लोक प्रशासन में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध हैं और दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं।

सचमुच में, द्वितीय विश्वयुद्ध एवं उसके बाद तुलनात्मक साहित्य की स्थिति में पर्याप्त महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिलता है। आज तुलनात्मक लोक प्रशासन ने एक सम्मानित अकादमिक एवं व्यावसायिक स्थिति प्राप्त कर ली है। इसका प्रमाण सन्दर्भिकाओं, पुस्तकों, पत्रिकाओं, सम्मेलनों, शैक्षणिक पाठ्यक्रमों और व्यावसायिक कार्यक्रमों आदि की निरन्तर बढ़ती हुई संख्या है।[2] इस परिवर्तन के दो प्रेरणा-स्रोत हैं—नीति-उन्मुख उत्प्रेरक और बौद्धिकता उन्मुख उत्प्रेरक। तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन, विकास और प्रेरक के रूप में अमरीका का योगदान उल्लेखनीय रहा है। लोक प्रशासन में तुलनात्मक शोध आन्दोलन का प्रारम्भ उस समय हुआ जब द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अमरीका की सेना का कुछ विदेशी

---

1 Alfred Diamant : *The Relevance of Comparative Politics to the Study of Comparative Administration*, Administrative Science Quarterly, V, 1960, p. 87.

2 Ramesh Arora : *op. cit.*, p. 13.

भूमि पर आधिपत्य हुआ था। सेना के कार्मिक और सैनिक प्रशासकों को विभिन्न सांस्कृतिक वातावरण में कार्य करने में कठिनाई का सामना करना पड़ा। ऐसी स्थिति में यह समझ में आना कि बिना व्यवस्थित तुलनात्मक अध्ययन के विषय को समझना सम्भव नहीं है।[1] इसी दौरान, विभिन्न सांस्कृतिक विन्यासों में कार्यरत विद्वान भिन्न-भिन्न पर्यावरणों में विद्यमान संरचनाओं की बहुकार्यकर्ताओं से भी परिचित हुए और इस नवीन ज्ञान का उपयोग उन्होंने तुलनात्मक अध्ययन को अधिक व्यवस्थित बनाने के लिए किया। तदोपरान्त इस तथ्य पर विशेष बल दिया जाने लगा कि प्रशासनिक संस्थाएँ केवल प्रशासनिक कार्य ही सम्पादित नहीं करतीं, किन्तु राजनीतिक, आर्थिक तथा अन्य प्रकृति की क्रियाओं में भी अप्रत्यक्ष एवं प्रत्यक्ष रूप से भाग लेती हैं।[2] द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद तुलनात्मक अध्ययन के प्रति रुचि में वृद्धि हुई। अमरीका द्वारा यूरोप के आर्थिक पुनरुद्धार के लिए बनायी गयी मार्शल योजना और बाद में विकासशील देशों के लिए निर्मित चार-सूत्री कार्यक्रम के लागू होने से तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास को और बल मिला। सहायता देने के साथ ही अनुभव होने लगा था कि विकासशील देशों को दी जाने वाली वित्तीय सहायता का सही उपयोग तब तक नहीं हो सकता था जब तक कि इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का आधुनिकीकरण न हो जाय। इस प्रकार प्रशासनिक दक्षता एवं कार्यकुशलता की अभिवृद्धि के बिना इन देशों का आर्थिक विकास सम्भव नहीं था। फलस्वरूप अमरीकी विद्वानों ने इन देशों के प्रशासनिक तन्त्रों की कार्य-प्रणाली के प्रति रुचि लेनी प्रारम्भ की। अतः तकनीकी सहायता कार्यक्रम के साथ तुलनात्मक प्रशासनिक प्रक्रियाओं के बारे में लेखन कार्य भी प्रारम्भ किया। अमरीकी विद्वान संयुक्त राष्ट्र के तकनीकी सहायता दलों में सम्मिलित हो गये और तृतीय विश्व के देशों की सामाजिक-राजनीतिक और प्रशासनिक ढाँचे का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया। इस प्रकार अमरीकी विद्वानों की पहल पर लोक प्रशासन में तुलनात्मक शोध का कार्य प्रारम्भ हुआ। आगे चलकर अन्तर्राष्ट्रीय प्रशासनिक सुधारों का एक आन्दोलन उभरने लगा जिसमें अमरीकी सरकार को अमरीकी विश्वविद्यालयों, निजी प्रतिष्ठानों और बहुपक्षीय संगठनों से भी सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ। लोक प्रशासन के विद्यार्थियों के दल प्रशासनिक सुधार के कार्यक्रम में जुट गये। उस काल में विभिन्न विकासशील देशों में कार्यरत लोक प्रशासन के विद्यार्थियों में सचेतन पारिस्थितिकीय परिप्रेक्ष्य विकसित हुआ। कालान्तर में विकासशील देशों में बढ़ती हुई आर्थिक एवं तकनीकी सहायता के साथ अधिकाधिक विद्वान यहाँ आधुनिकीकरण की समस्याओं में रुचि लेने लगे।[3] विश्व मंच पर नवोदित राष्ट्रों के अभ्युदय के फलस्वरूप तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र में वैज्ञानिक व्यवस्थाओं का उनके पर्यावरणों के सन्दर्भ में अध्ययन कर लोक प्रशासन के विद्वान अपने चिन्तन को अधिक अनुभवमूलक आधार प्रदान करने लगे। इन देशों में आर्थिक और सामाजिक विकास के साथ-साथ प्रशासनिक विकास के पहलू पर ध्यान दिया जाने लगा और लगभग सभी राष्ट्रों में प्रशासनिक साहित्य निर्माण में भारी वृद्धि हुई। यह प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ती जा रही है और इस प्रकार इस साहित्य भण्डार में तुलनात्मक लोक प्रशासन के ज्ञान को एक ठोस आधार प्रदान किया।[4]

---

1 V. N. Viswanathan : *Comparative Public Administration*, Sterling Publishers Private Limited, New Delhi, 1995, p. 20.

2 Ramesh Arora : *op. cit.*, pp. 13-14.

3 Ramesh Arora : *op. cit.*, p. 14.

4 T. N. Chaturvedi : *op. cit.*, p. 17.

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के समय में लोक प्रशासन में अनेक युवा विद्वान अकादमी क्षेत्र को अस्थायी रूप से छोड़कर व्यावहारिक सरकारी प्रशासन में संलग्न हो गये थे। इस नये अनुभव के परिणामस्वरूप ये विद्वान पारम्परिक अमरीकी लोक प्रशासन के संस्कृति-बद्ध रूप से असन्तुष्ट हो गये थे। **राबर्ट डल** का यह तर्क कि "जब तक लोक प्रशासन का अध्ययन तुलनात्मक नहीं बनता उसके विज्ञान बनने के दावे सारहीन ही हैं।"[1] उस समय के दशक का यह एक उदाहरण है। **रमेश अरोड़ा** ने इस सन्दर्भ में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है : "फलतः तुलनात्मक लोक प्रशासन के विद्यार्थी तुलनात्मक समाजशास्त्र, मानव विज्ञान तथा अन्य क्षेत्रों के विकास से परिचित होकर, अपने क्षेत्र में भी संकर-सांस्कृतिक (Cross Cultural), संकर-राष्ट्रीय (Cross-National) और संकर-कालिक प्रासंगिकता की सैद्धान्तिक रचनाओं के विचार में अधिक रुचि लेने लगे। उन्होंने स्वीकार किया कि अमरीकी सांस्कृतिक सन्दर्भ में विकसित हो रही परिकल्पनाओं को लोक प्रशासन विज्ञान का भाग होने के लिए संकर-सांस्कृतिक विन्यासों में परीक्षित किया जाना चाहिए। इस परीक्षण के बाद ही लोक प्रशासन के सिद्धान्तों की रचना की जा सकती है। अतः लोक प्रशासन की विद्या को सुदृढ़ वैज्ञानिक आधार प्रदान करने के लिए तुलनात्मक पद्धति के महत्व पर प्रकाश दिया जाने लगा। इस बल के फलस्वरूप तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास की गति तीव्र हुई।"[2]

तुलनात्मक लोक प्रशासन में व्यवहारवाद

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद लोक प्रशासन के विद्यार्थियों का प्रमुख ध्यान इस बात पर गया कि लोक प्रशासन के अध्ययन को पारम्परिक एवं औपचारिक प्रवृत्तियों से हटाकर प्रशासनिक संगठन में मानव के वास्तविक व्यवहार पर अध्ययन किस प्रकार केन्द्रित किया जाय। यही रुचि सामाजिक विज्ञानों में तथाकथित 'व्यवहारवादी आन्दोलन' में उत्प्रेरक सिद्ध हुई।

यह सर्वविदित तथ्य है कि व्यवहारवादी आन्दोलन ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। आधुनिक व्यवहारवाद, जिसका प्रारम्भ द्वितीय विश्वयुद्ध के पूर्व हुआ, वस्तुतः मानवीय व्यवहारवाद का वैज्ञानिक विवेचन करने में रुचि लेता है। यह किसी संस्था के रूप और संगठन की औपचारिक व्यवस्था का अध्ययन करने की अपेक्षा उसके सदस्यों के आपसी सम्बन्ध, औपचारिक व्यवहार तथा वास्तविक स्वरूप का विवेचन करना चाहता है। राजनीति विज्ञान में पारम्परिक, ऐतिहासिक, आदर्शात्मक और मुख्यतः वर्णनात्मक विश्लेषणों की अध्ययन-विधि के विरोध के फलस्वरूप ही इस नवीन विचारधारा का जन्म हुआ, जबकि प्रशासनिक अध्ययनों में व्यवहारवाद का आरम्भ मानव सम्बन्ध आन्दोलन एवं उसके बाद के बर्नार्ड, साइमन की कृतियों के प्रकाशन में माना जाता है। 1930-1940 के काल में व्यवहारवाद का प्रभाव प्रायः सभी अनुशासनों पर पड़ रहा था। लोक प्रशासन भी इसका अपवाद नहीं था। **साइमन** के अनुसार, 'प्रशासनिक व्यवहार' का अध्ययन व्यवहारवादी आन्दोलन का एक अंग है और केवल विषय-वस्तु में ही राजनीतिक व्यवहार, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, मनोविज्ञान तथा अन्य व्यवहारवादी विद्याओं से भिन्न है। प्रशासनिक अध्ययन में व्यवहारवादी दृष्टिकोण की कुछ मुख्य विशेषताएँ अग्र प्रकार हैं :

---

1 Dahl, Robert : *The Science of Public Administration : Three Problems,* Public Administration Review, Section VII (1947), p. 111.

2 Ramesh Arora : *op. cit.*, p. 16.

1. व्यवहारवादी साहित्य आदर्शात्मक एवं निर्देशात्मक होने की अपेक्षा वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अधिक है। यह प्रशासनिक संस्थाओं को अध्ययन की मौलिक इकाई नहीं मानता परन्तु प्रशासनिक परिस्थितियों में स्थित व्यक्ति के व्यवहार को विश्लेषण की मौलिक इकाई के रूप में स्वीकार करता है।
2. यह प्रयोग की जाने वाली शब्दावली की कार्यात्मक परिभाषा, पर्यवेक्षण, परीक्षण एवं प्रयोगशालीय अध्ययन जैसी परिशुद्ध अनुसन्धान विधियों पर आधारित अनुभववादी अध्ययन पर बल देता है।
3. व्यवहारवाद का चरित्र अन्तरविषयी है एवं यह दूसरे सामाजिक विज्ञानों को व्यवहारवादी विज्ञानों के रूप में देखता है तथा अन्य सामाजिक विज्ञानों के साथ लोक प्रशासन की एकता पर बल देता है।

व्यवहारवादी दृष्टिकोण ने लोक प्रशासन में वैज्ञानिक अनुसन्धान तथा व्यवस्थित सिद्धान्त-निर्माण की प्रक्रियाओं को प्रोत्साहन प्रदान किया है। अन्तर-सांस्कृतिक सन्दर्भ में परिकल्पनाओं के परीक्षण ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन को आवश्यक बना दिया है। तुलनात्मक लोक प्रशासन ने विभिन्न प्रशासनिक व्यवस्थाओं के विभिन्न पर्यावरणों का अध्ययन करने के लिए दूसरे सामाजिक विज्ञानों से अवधारणाएँ, प्रसाधन तथा निष्कर्ष ग्रहण किये और इस प्रकार अन्तर-अनुशासनात्मक दृष्टिकोण का विकास हुआ। व्यवहारवाद के प्रभाव के फलस्वरूप लोक प्रशासन के विद्वानों ने वैज्ञानिक अनुसन्धान पद्धतियों का प्रयोग कर प्रशासनिक व्यवहार का अन्तर-सांस्थानिक, अन्तर्राष्ट्रीय एवं अन्तर-सांस्कृतिक अध्ययन किया है। इससे लोक प्रशासन के ज्ञान को तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में विकसित होने में सुविधा हुई है।

प्रशासनिक व्यवहार की दृष्टि से विचारकों द्वारा अनेक महत्वपूर्ण समस्याओं पर विचार किया गया, जैसे—नौकरशाही, मानव-सम्बन्ध, प्रेरणा के स्रोत, निर्णय लेने की प्रक्रिया आदि। संक्षेप में, धीरे-धीरे तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययनों पर व्यवहारवाद का प्रभाव बढ़ रहा है। अन्य देशों की तरह भारत में भी व्यवहारवादी अनुसन्धान का उपयोग लोक प्रशासन के अध्ययन में देखने को मिलता है। परन्तु यह अध्ययन सीमित है। इस दिशा में कार्य करने वाले विद्वान हैं चन्द्रप्रकाश भाम्भरी, कुलदीप माथुर, वी. ए. पनन्दीकर, रामाश्रय राय एवं शान्ति कोठारी। हमारे यहाँ इस दिशा में अधिक मात्रा में कार्य करने की आवश्यकता है।

तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन के लिए समय-समय पर अनेक समितियों, सम्मेलनों एवं गोष्ठियों का आयोजन होता रहा है। इस दृष्टि से अमरीका सबसे आगे रहा।

तुलनात्मक लोक प्रशासन का संगठनात्मक पक्ष

तुलनात्मक लोक प्रशासन का प्रथम व्यवस्थित प्रयास 1952 में किया गया जबकि अमरीका स्थित पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन क्लियरिंग हाउस ने तुलनात्मक प्रशासन पर प्रिन्सटन में एक 'तुलनात्मक प्रशासन सम्मेलन' आयोजित किया। सम्मेलन में एक तुलनात्मक लोक प्रशासन उपसमिति गठित की जिसका उद्देश्य विदेशों में अध्ययन हेतु एक संगतिपूर्ण मानदण्ड का विकास करना था। उपसमिति ने अपने प्रतिवेदन में तुलनात्मक क्षेत्रीय अनुसन्धान पर वॉलेस सेयर और हर्बर्ट कॉफमैन द्वारा रचित एक संशोधित रूपरेखा को सम्मिलित किया। 1953 में अमरीकन राजनीति विज्ञान परिषद ने तुलनात्मक प्रशासन पर एक तदर्थ

बनायी जो 1963 में तुलनात्मक प्रशासन ग्रुप की स्थापना तक बनी रही। तुलनात्मक प्रशासन दल की स्थापना 1963 में लोक प्रशासन के लिए अमरीकी समाज द्वारा की गयी। प्रारम्भ में तीन वर्ष के लिए स्थापित एवं इसकी वित्तीय व्यवस्था फोर्ड फाउण्डेशन द्वारा की गयी थी। फोर्ड फाउण्डेशन ने तुलनात्मक प्रशासन दल को दूसरा अनुदान पाँच वर्ष के लिए 1966 में प्रदान किया, किन्तु 1971 में इस अनुदान का नवीनीकरण नहीं किया गया। फ्रेड रिग्स प्रारम्भ से लेकर 1970 तक इसके अध्यक्ष रहे। इन्होंने तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र में बहुत कार्य किया। रिग्स के बाद रिचर्ड गेबल इसके अध्यक्ष बने।

फोर्ड फाउण्डेशन के अनुदान के कारण तुलनात्मक प्रशासन दल विकासशील देशों के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक पर्यावरण के व्यवस्थित सन्दर्भ में प्रशासनिक समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित किया। दल अनुसन्धान, परिसंवाद, सम्मेलन और शिक्षण सामग्री तथा अभिगमों के परिष्करण के क्षेत्रों में कार्य करता है। साथ ही यह विकास प्रशासन से सम्बद्ध विद्वानों और व्यावहारिक कार्यकर्ताओं के बीच सम्पर्क-साधन के रूप में कार्य करता है। इसके सदस्यों में विद्वान और सरकारी अधिकारी दोनों सम्मिलित हैं। इसकी गतिविधियों का क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय है। इसने एशिया, अमरीका और यूरोप में तुलनात्मक लोक प्रशासन सम्बन्धी अनुसन्धानों को प्रोत्साहित किया है। तुलनात्मक प्रशासन दल ने अनेक परिसंवाद आयोजित किये हैं तथा अमरीकी विश्वविद्यालयों में और विभिन्न राष्ट्रों जैसे कोरिया, ब्राजील और इटली में अनुसन्धान परियोजनाएँ चलायी हैं।

तुलनात्मक प्रशासन दल 11 समितियों के माध्यम से कार्य करती है। समितियाँ विभिन्न विषयों से सम्बन्धित हैं : एशिया, यूरोप, दक्षिण अमरीका, अफ्रीका, राष्ट्रीय योजना, तुलनात्मक नगर प्रशासन और राजनीति, संगठन के सिद्धान्त, अन्तर्राष्ट्रीय प्रशासन, तुलनात्मक विधायी अध्ययन, तुलनात्मक शिक्षा अध्ययन तथा व्यवस्था सिद्धान्त। यह दल सैद्धान्तिक विकास सीमित क्षेत्रीय आधार पर करने का प्रयास करता है। तुलनात्मक प्रशासन दल संयुक्त राष्ट्र, उसकी इकाइयों तथा अन्य राष्ट्रीय सरकारों से सम्पर्क बनाये रखता है। इसकी शोध पत्रिका *The Journal of Comparative Administration* (1969) तथा *'न्यूज लेटर'* नियमित रूप से प्रकाशित होते हैं। साथ ही दल के तत्वावधान में प्रायोगिक शिक्षण परियोजनाएँ चलायी गयीं और तुलनात्मक प्रशासन में क्षेत्रीय अनुसन्धान को प्रोत्साहित किया गया है। इससे सम्बद्ध प्रशासनविदों के कुछ नाम बहुत प्रसिद्ध हैं, जैसे रॉल्फ बाइबेण्टी, एल्फ्रेड डायमण्ड, सेम्युअल आइजन्स्टैड, बेर्ट्रम ग्रास, फैरेल हैडी, वाटेन इल्वमैन, जॉन मॉण्टगोमरी, फ्रेड रिग्स, फ्रेंक शेरवुड, विलियम सिफिन, वाल्डो, आदि। इनके प्रयासों के परिणामस्वरूप तुलनात्मक लोक प्रशासन एक विश्वव्यापी शैक्षिक आन्दोलन बन गया। उसके तात्कालिक सभापति काल्डवेन ने लिखा है कि तुलनात्मक प्रशासन दल ने प्रशासनिक व्यवहार से सम्बद्ध शाश्वत एवं प्रामाणिक ज्ञान के निकाय को शीघ्र विकसित करने, लोक प्रशासन के अनुशासन का ठोस एवं सामान्य विकास अमरीका के अलावा भी, इस विषय के शिक्षण से सम्बन्धित पाठ्यक्रम लागू किये हैं। फ्रेंक शेरवुड का यह कथन सही है कि तुलना के बिना सिद्धान्त के अच्छे पाठ्यक्रम नहीं बनते तथा सिद्धान्त के आधार के बिना तुलना के अच्छे पाठ्यक्रम नहीं हो सकते।

तुलनात्मक लोक प्रशासन के उपर्युक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वह एक विश्वव्यापी आन्दोलन बन गया है और सभी देशों ने इसके महत्व को स्वीकार कर लिया है।

तुलनात्मक लोक प्रशासन ने अपने विकास के दौरान कुछ प्रवृत्तियाँ विकसित कर ली हैं। रॉबर्ट जैक्सन के मतानुसार ये प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित हैं :

1. लोक प्रशासन का विज्ञान न्यूनाधिक मात्रा में प्राप्ति योग्य है। प्रशासनिक व्यवहार का विश्लेषण किया जा सकता है तथा उससे सिद्धान्त रचना सम्भव हो सकती है।
2. वैज्ञानिक अध्ययन के लिए प्रशासन द्वारा प्रयुक्त पद्धतियों का विभिन्न संस्कृतियों एवं राष्ट्रीयताओं के परिवेश में अनुसन्धान करना चाहिए।
3. इससे प्राप्त आनुभविक निष्कर्षों की परिशुद्ध व्यवस्थित तुलनात्मक विश्लेषणों के माध्यम से जाँच की जानी चाहिए।
4. ऐसा करने से विविध स्तर पर लागू किये जा सकने वाले सामान्यीकरण प्राप्त होंगे। इसके सहारे परिकल्पनाओं, प्रारूपों, आदि का निर्माण आगे चलकर एक व्यापक सामान्य सिद्धान्त का विकास किया जा सकता है।

उक्त मान्यताएँ यह बतलाती हैं कि लोक प्रशासन एक विज्ञान बनने की प्रक्रिया में है। साथ ही उक्त मान्यताएँ समस्त देशों में लागू होती हैं। आशा है अन्ततः संगठन का तुलनात्मक अध्ययन संगठन सिद्धान्त के वास्तविक सार्वभौमिक सामान्यीकरण के निर्माण को सम्भव बनायेगा।

प्रो. रिग्स ने लोक प्रशासन के तुलनात्मक अध्ययन में तीन प्रवृत्तियों का उल्लेख किया है : (अ) आदर्शात्मक से अनुभव सम्बन्धी, (ब) विशिष्टता से सामान्यतापरक, (स) गैर-पारिस्थितिकीय से पारिस्थितिकीय।

आदर्शात्मक अध्ययनों से तात्पर्य उन अध्ययनों से है जिनमें प्रशासनतन्त्र द्वारा कुछ निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की वांछनीयता पर बल दिया जाता है तथा उनका अधिकांश विश्लेषण 'क्या होना चाहिए' पर केन्द्रित होता है। व्यवहारवादी आन्दोलन ने लोक प्रशासन के अध्ययनों को निर्देशात्मकता से दूर ले जाने का प्रयत्न किया है तथा प्रशासनिक अनुसन्धान में अनुभव सम्बन्धी बातों पर बल दिया है। अनुभव सम्बन्धी अध्ययनों में प्रशासनिक वास्तविकता को समझने का प्रयास किया जाता है। रिग्स के अनुसार धीरे-धीरे तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन अपने पारम्परिक आदर्शात्मक स्वरूप को छोड़कर अनुभव सम्बन्धी विशेषताएँ ग्रहण करते जा रहे हैं।

'इडियोग्राफिक' (विशिष्टता) तथा 'नोमोथैटिक' (सामान्यतापरक) शब्द रिग्स की देन हैं। इडियोग्राफिक अध्ययन किसी एक विशेष ऐतिहासिक घटना, एक विशेष प्रशासनिक समस्या, एक विशेष संस्था, राष्ट्र या एक विशेष जीवनी से सम्बन्धित होते हैं। इस प्रकार इन अध्ययनों में प्रशासनिक विश्लेषण की विषय-वस्तु कोई एक विशेष इकाई होती है। दूसरी ओर 'नोमोथैटिक' अध्ययन से गहन तुलनात्मक विश्लेषण पर आधारित सिद्धान्त के निर्माण की प्रक्रिया पर बल दिया जाता है। इस सम्बन्ध में रिग्स का मत है कि तुलनात्मक लोक प्रशासन अपने पारम्परिक 'इडियोग्राफिक' रूप को छोड़कर 'नोमोथैटिक' रूप ग्रहण कर रहा है।

तीसरी प्रवृत्ति पारिस्थितिकीय से सम्बन्धित है। इसमें पारम्परिक अध्ययनों में प्रशासनिक संस्थाओं का अध्ययन या विश्लेषण उनके आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि पर्यावरणों के सन्दर्भ में कम किया जाता था। इसलिए उनमें पर्यावरण के प्रशासन पर प्रभाव तथा प्रशासन के पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव

था। इसे गैर-पारिस्थितिकीय अध्ययन कहा जाता है। किन्तु अब माना जाता है कि गतिशील पर्यावरणों में कार्यरत प्रशासनिक संस्थाओं का वास्तविक व्यवहार बिना उनकी पारिस्थितिकी के सन्दर्भ के नहीं समझा जा सकता। फलस्वरूप, आधुनिक तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययनों में प्रशासन तथा उसके पर्यावरण के बीच होने वाली गत्यात्मक अन्तर्क्रियाओं का गहन अध्ययन करने का प्रयत्न किया जाता है। यह पारिस्थितिकीयोन्मुख अध्ययन है।[1]

फैरेल हैडी, रिग्स के उक्त शब्दावली से पूर्णतः सहमत नहीं है किन्तु वह तुलनात्मक लोक प्रशासन के पीछे निहित प्रेरक कारकों की ओर ध्यान केन्द्रित करता है। ये प्रेरक कारक उसे पाँच दिशाओं की ओर ले गये हैं—(अ) सिद्धान्त निर्माण, (ब) विकासशील देशों में समस्या के समाधान हेतु उक्त ज्ञान का क्रियात्मक उपयोग, (स) तुलनात्मक लोक प्रशासन के साथ-साथ राजनीति को भी योगदान, (द) महाद्वीपीय विधि परम्परा में अभिरुचि, तथा (ल) लोक प्रशासन की शाश्वत समस्याओं का तुलनात्मक आधार पर अध्ययन।

जॉन कुआह ने तुलनात्मक लोक प्रशासन की कुछ विशेषताओं का उल्लेख करते हुए बताया है कि वह (i) एक नया युवा आन्दोलन है और उसमें जोश है। उसकी जड़ें व्यवहारवादी आन्दोलन में देखने को मिलती हैं। (ii) वह एक पूर्व-विचार चित्रात्मक अवस्था में है। इसका आशय यह है कि अभी उसमें किसी व्यापक सामान्य सिद्धान्त का विकास नहीं हुआ है। इस समय उसमें प्रतिस्पर्द्धी उपागमों की भरमार है। (iii) रिग्स ने उसे आनुभविक, सामान्यतापरक तथा पारिस्थितिकीय कहा है। मोरोनी के अनुसार उस पर उत्तर-व्यवहारवादी क्रान्ति की स्पष्ट छाप है। (iv) काल्डवेन की दृष्टि से वर्तमान तुलनात्मक लोक प्रशासन अमरीकी विद्वानों के योगदान का परिणाम रहा है। किन्तु अब वह विभिन्न विकासशील देशों में भी उसके अनेक केन्द्र स्थापित हो गये हैं और वे सभी अपने तरीके से काम कर रहे हैं। (v) एक सबसे बड़ी विशेषता सिद्धान्त निर्माण की ओर अभिरुचि है। रिग्स का कृषक-औद्योगिक प्रारूप तथा समपार्श्वीय समाज, प्रेस्थस का मध्यस्तरीय सिद्धान्त आदि इसी दिशा की ओर बढ़ाये गये कदम हैं। (vi) वर्तमान समय में तुलनात्मक प्रशासनविदों का ध्यान विकासशील देशों की ओर लगा हुआ है।

प्रयोजन—तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन के निम्नलिखित प्रयोजन हैं :

(i) किसी विशिष्ट प्रशासनिक प्रणाली या प्रणाली समूहों की विशिष्टताओं का अध्ययन;
(ii) प्रशासनिक व्यवहार में संकर-सांस्कृतिक और संकर-राष्ट्रीय भिन्नताओं के लिए उत्तरदायी घटकों की व्याख्या करना;
(iii) किसी विशिष्ट पारिस्थितिक विन्यास में विशिष्ट प्रशासनिक रूपों की सफलता एवं असफलताओं के कारणों की जाँच-पड़ताल करना; तथा
(iv) प्रशासनिक सुधारों की कार्य-नीति को समझना।

---

1 Arora, R. K. : *op. cit.*, p. 5.